Impact Factor (SJIF): 6.126 E-ISSN: 2583-1615, P-ISSN: 3049-3498

International Journal of Research in Academic World

Received: 20/March/2025 **IJRAW:** 2025; 4(4):233-237 **Accepted:** 28/April/2025

हरिशंकर परसाई की रचना 'जैसे उनके दिन फिरे' कहानी संग्रह–पुस्तक परीक्षण

***[1]डॉ. गीता संतोष यादव और [2]अनुष्का प्रदीप पाचंगे**

*[1]सहयोगी प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, एस.एम्.आर.के. महिला महाविद्यालय, नाशिक, महाराष्ट्र, भारत।

[2]शोध-छात्रा, हिन्दी विभाग, एस.एन.डी.टी. महिला विद्यापीठ, मुम्बई, महाराष्ट्र, भारत।

सारांश

"जैसे उनके दिन फिरे" हरिशंकर परसाई की व्यंग्य कनियों का संग्रह हैं। इसमें कुल उन्नीस कहानियाँ समाहित हैं। हरिशंकर परसाई हिंदी साहित्य के प्रसिद्ध व्यंग्यकार थे, जिनकी रचनाओं ने समाज की विसंगतियों, राजनीतिक भ्रष्टाचार और मानवीय दुर्बलताओं पर करारी चोट की है। जैसे उनके दिन फिरे हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है।

मुख्य शब्द: जैसे उनके दिन फिरे, हरिशंकर परसाई, पाठक जी, व्यंग्यात्मकता, विडम्बना, सामाजिकता, हास्य-व्यंग्यात्मकता आदि।

प्रस्तावना

इस कहानी संग्रह की पहली कहानी जैसे उनके दिन फिरे रचना है। जैसे उनके दिन फिरे में परसाई ने आम आदमी के दैनिक जीवन की उन विसंगतियों को चित्रित किया है, जहाँ बाहरी आडंबर और आंतरिक खोखलापन साफ़ झलकता है। रचना में एक ऐसे व्यक्ति का चित्रण है, जो अपने दिनचर्या में समाज द्वारा थोपे गए झूठे मूल्यों और रीति-रिवाजों का पालन करता है, लेकिन उसकी वास्तविकता उसके दिखावे से बिल्कुल अलग होती है।परसाई की भाषा सरल, सहज और प्रभावी है, जो पाठक को तुरंत जोड़ती है। वे व्यंग्य के साथ हास्य का मिश्रण करते हैं, जिससे गंभीर विषय भी पठनीय बन जाता है।

इस रचना में वे "उल्टबाँसी" (विरोधाभास) का प्रयोग करते हैं—जैसे, "वे सच बोलने का प्रयास करते हैं, लेकिन झूठ ही उनकी ज़ुबान पर चढ़कर बोलता है।" परसाई ने मध्यवर्गीय समाज की "दिखावटी संस्कृति" पर करारी चोट की है। वे दिखाते हैं कि कैसे लोग समाज में प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिए झूठे आदर्शों का पालन करते हैं। "रिश्तों का दोगलापन" भी एक प्रमुख विषय है—जैसे, लोग बाहर तो सभ्यता की मुखौटा लगाए रहते हैं, लेकिन घर के अंदर उनका व्यवहार पूरी तरह बदल जाता है। आज के दौर में, जहाँ सोशल मीडिया की दिखावटी दुनिया हावी है, परसाई का यह व्यंग्य और भी प्रासंगिक हो जाता है। आज भी लोग वाहवाही पाने के लिए झूठी छवि बनाए रखते हैं।

इस पुस्तक की दूसरी व्यंग्य रचना "इति श्री रिसर्चचाय" एक प्रहसन (सैटायर) है जो शोध और अकादमिक जगत की बढ़ती हुई फर्जीवाड़ेबाजी, दिखावटी पांडित्य और नकली शोधकार्य पर करारा प्रहार करती है। यह रचना परसाई के विशिष्ट व्यंग्यशैली का उत्कृष्ट उदाहरण है, जहाँ वे समाज की विसंगतियों को हास्य और तीखेपन के साथ उजागर करते हैं।

"इति श्री रिसर्च चाय" एक छोटी-सी व्यंग्य कथा है, जिसमें एक शोधार्थी अपने गाइड (मार्गदर्शक) के साथ चाय पीते हुए शोध की थीसिस पर चर्चा करता है। धीरे-धीरे बातचीत से पता चलता है कि शोध का उद्देश्य ज्ञान प्राप्ति नहीं, बल्कि डिग्री हासिल करना और औपचारिकताएँ पूरी करना है। शीर्षक में "इति श्री" (पारंपरिक रूप से किसी कार्य की समाप्ति का संकेत) और "रिसर्च चाय" (शोध के नाम पर की जाने वाली गपशप) का मजाकिया संयोजन शोध की दिशाहीनता को दर्शाता है। परसाई शोधार्थियों और शिक्षकों की उस मानसिकता पर चोट करते हैं, जहाँ शोध का मूल उद्देश्य "कुछ नया खोजना" नहीं, बल्कि "कागजी कार्रवाई पूरी करना" होता है। गाइड और छात्र के बीच का संवाद दिखाता है कि कैसे शोध के नाम पर अर्थहीन चर्चाएँ की जाती हैं। "इति श्री रिसर्च चाय" हरिशंकर परसाई की वह रचना है जो शोध की आड़ में होने वाली फर्जीवाड़ेबाजी को बेनकाब करती है। यह न केवल हँसाती है, बल्कि शिक्षा जगत की खोखली महत्वाकांक्षाओं पर प्रश्नचिह्न भी लगाती है। आज भी जब शोध और पद्धतियाँ यांत्रिक होती जा रही हैं, यह रचना अत्यंत प्रासंगिक है।

इस पुस्तक की तीसरी व्यंग्य रचना "भेड़ और भेड़िए" एक लघु कथा के रूप में प्रस्तुत की गई है, जो प्रतीकात्मक शैली में समाज के शोषण तंत्र और आम जनता की मानसिकता को उजागर करती है। इस कहानी में भेड़ों का एक समूह भेड़ियों के आतंक से त्रस्त है। भेड़ें भेड़ियों से बचने के लिए एक योजना बनाती हैं कि वे भेड़ियों को रोज एक भेड़ खाने के लिए दे देंगी, ताकि बाकी भेड़ें सुरक्षित रह सकें। इस व्यवस्था से भेड़िये संतुष्ट हो जाते हैं, और भेड़ें यह

***Corresponding Author:** डॉ. गीता संतोष यादव

सोचकर खुश होती हैं कि, उन्होंने अपनी समस्या का हल निकाल लिया है। लेकिन धीरे-धीरे भेड़िये भेड़ों की संख्या कम होने पर चिंतित होते हैं और एक नई शर्त रखते हैं—अब वे रोज दो भेड़ें खाएँगे। भेड़ें मजबूरन यह शर्त स्वीकार कर लेती हैं। अंततः जब भेड़ें बहुत कम रह जाती हैं, तो भेड़िये उन सभी को एक साथ खा जाते हैं।-भेड़ आम जनता का प्रतीक हैं, जो शोषण को नियति मानकर स्वीकार कर लेती है। भेड़िए शोषक वर्ग (नेता, पूँजीपति, अधिकारी) का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो जनता का शोषण करते हैं और उनकी मूर्खता का फायदा उठाते हैं। परसाई जी जनता की अंधानुकरणशीलता, भय और संघर्ष से बचने की प्रवृत्ति पर व्यंग्य करते हैं। भेड़ों की तरह समाज भी शोषण को इसलिए स्वीकार कर लेता है क्योंकि वह "थोड़ी सुरक्षा" के लालच में फँस जाता है। कहानी में लोकतंत्र के नाम पर चलने वाले तानाशाही तंत्र की ओर इशारा है। भेड़िये "समझौतावादी राजनीति" का प्रतीक हैं, जो जनता को बाँटकर शासन करते हैं। "भेड़ और भेड़िए" एक लघु कथा होते हुए भी सामाजिक अन्याय, राजनीतिक शोषण और जनता की मूक स्वीकृति पर गहरा प्रहार करती है। परसाई का व्यंग्य सिर्फ मनोरंजन नहीं करता, बल्कि पाठक को जागरूक और आलोचनात्मक बनने की प्रेरणा देता है। यह रचना आज के समय में भी प्रासंगिक है, जहाँ सत्ता और पूँजी के शिकंजे में आम आदमी फँसा हुआ है।इस प्रकार, हरिशंकर परसाई की यह व्यंग्य रचना न केवल पाठक को हँसाती है, बल्कि उसे समाज की कड़वी सच्चाइयों से रूबरू भी कराती है।

इस पुस्तक की चौथी व्यंग्य रचना "चार बेटे" एक ऐसे बूढ़े पिता की कहानी है, जिसके चार बेटे हैं। पिता अपने जीवनभर मेहनत करके बेटों को पाला-पोसा और पढ़ाया-लिखाया, लेकिन बुढ़ापे में उसे कोई सहारा नहीं देता। चारों बेटे अपने-अपने तर्क देकर पिता की जिम्मेदारी से बचते हैं। अंत में, पिता की मृत्यु हो जाती है, और बेटे उसके अंतिम संस्कार के लिए भी झगड़ते हैं कि खर्चा कौन उठाएगा। परसाई इस कहानी के माध्यम से यह दिखाते हैं कि आधुनिकता और भौतिकवाद ने पारिवारिक संबंधों को कितना खोखला बना दिया है। बेटे शिक्षित और सभ्य होने का दावा करते हैं, लेकिन उनमें मानवीय संवेदनाएँ नहीं हैं। चारों बेटे अपने पिता की उपेक्षा करते हैं और हर बहानेबाजी करके उससे दूर भागते हैं। यह समाज में बढ़ती स्वार्थपरता और कृतघ्नता पर तीखा व्यंग्य है। अंतिम संस्कार के समय बेटों का झगड़ा यह दर्शाता है कि लोग धर्म और संस्कारों का पालन केवल दिखावे के लिए करते हैं, वास्तव में उनके मन में संवेदनशीलता नहीं होती। परसाई मध्यमवर्ग की उस मानसिकता पर प्रहार करते हैं, जहाँ लोग दिखावे और समाज की नजरों में बने रहने के लिए जीते हैं, लेकिन असल जिंदगी में नैतिकता और कर्तव्य का पालन नहीं करते। "चार बेटे" एक ऐसी व्यंग्य रचना है, जो पाठकों को हँसाते-हँसाते सोचने पर मजबूर कर देती है। हरिशंकर परसाई ने समाज की कुरीतियों को बिना लाग-लपेट के उजागर किया है और मानवीय संबंधों की दुर्दशा पर करारा प्रहार किया है। यह रचना न केवल व्यंग्य साहित्य की उत्कृष्ट कृति है, बल्कि एक सामाजिक दस्तावेज भी है।

इस पुस्तक की पाँचवी व्यंग्य रचना सुदामा के चावल कहानी है, जो सामाजिक विषमता, धार्मिक पाखंड और मानवीय दोषों पर करारी चोट करती है। यह रचना महाभारत के पात्र सुदामा और कृष्ण की मित्रता की पौराणिक कथा को आधुनिक संदर्भ में प्रस्तुत करती है, जहाँ गरीबी और ईमानदारी के प्रतीक सुदामा के चावलों के माध्यम से समाज की विसंगतियों को उजागर किया गया है।कहानी में सुदामा, एक गरीब ब्राह्मण, अपने मित्र कृष्ण से मिलने द्वारका जाता है और उन्हें भेंट के रूप में चावल ले जाता है। परसाई इस कथा को आधुनिक समाज के संदर्भ में पेश करते हैं, जहाँ सुदामा की निस्वार्थ भक्ति और सादगी के बावजूद उसके चावलों को लेकर समाज में विवाद खड़ा हो जाता है। लोग उसकी नीयत पर सवाल उठाते हैं, चावलों की गुणवत्ता को लेकर तर्क करते हैं, और अंततः उसकी भावना को नष्ट कर देते हैं। सुदामा के चावलों को प्रतीक बनाकर दिखाया गया है कि समाज में ईमानदारी और सादगी का कोई मूल्य नहीं है। लोग दान देने के बजाय उसकी खबर लेने लगते हैं और उसके पीछे छिपे उद्देश्य ढूँढ़ते हैं। रचना में गरीब-अमीर के बीच की खाई को दर्शाया गया है। सुदामा की गरीबी और कृष्ण का राजसी वैभव इस अंतर को उजागर करता है। आधुनिक समाज में गरीब की भावनाओं का मजाक बनाने की प्रवृत्ति पर कटाक्ष किया गया है।" सुदामा के चावल" एक ऐसी व्यंग्य रचना है जो पाठक को हँसाते-हँसाते समाज की कड़वी सच्चाई से रूबरू कराती है। परसाई ने इसमें न केवल धार्मिक आडंबरों पर प्रहार किया है, बल्कि मानवीय मूल्यों के क्षरण को भी रेखांकित किया है। यह कहानी हमें सोचने पर मजबूर करती है कि क्या आज भी हम सुदामा जैसे लोगों की भावनाओं को समझ पाते हैं या उन्हें भी उपहास का पात्र बना देते हैं।

इस पुस्तक की छठीं व्यंग्य रचना अपने-अपने ईष्टदेव के अनुसार व्यक्ति ईश्वर की अलग-अलग छवि गढ़ लेता है। कोई ईश्वर को दयालु मानता है, तो कोई न्यायकारी। कोई उन्हें भोग-विलास का प्रेमी मानता है, तो कोई त्याग और तपस्या का प्रतीक। लेखक कहते हैं कि लोग अपने-अपने इष्टदेव गढ़ लेते हैं और फिर उन्हीं के अनुसार ईश्वर की पूजा-अर्चना करते हैं। यहाँ ईश्वर नहीं, बल्कि मनुष्य का स्वार्थ प्रमुख होता है।परसाई जी ने इस रचना में धर्म के नाम पर फैले पाखंड पर तीखा प्रहार किया है। वे दिखाते हैं कि लोग ईश्वर को अपने हिसाब से ढाल लेते हैं: एक डाकू भगवान से सिर्फ इतनी प्रार्थना करता है कि उसका काम बन जाए, चाहे वह कितना भी अनैतिक क्यों न हो।एक पुजारी ईश्वर को भोग लगाकर खुद ही प्रसाद खा जाता है। एक व्यापारी ईश्वर से केवल धन माँगता है, भले ही वह अन्यायपूर्ण तरीके से कमाया गया हो। इस तरह, लेखक यह स्पष्ट करते हैं कि धर्म और ईश्वर की आड़ में लोग अपने स्वार्थ सिद्ध करते हैं।

इस रचना का मुख्य उद्देश्य यह दिखाना है कि धर्म और ईश्वर की आड़ में लोग कैसे स्वार्थ साधते हैं। आज के समय में जब धार्मिक कट्टरता और आडंबर बढ़ रहा है, यह रचना और भी प्रासंगिक हो जाती है। "अपने-अपने इष्ट देव" एक ऐसी व्यंग्य रचना है जो मनुष्य की स्वार्थपरक मानसिकता और धार्मिक पाखंड को बेनकाब करती है। परसाई जी ने बड़े ही सरल और हास्यपूर्ण अंदाज में समाज की इस विसंगति को उजागर किया है।

इस पुस्तक की सातवीं व्यंग्य रचना हरिशंकर परसाई की व्यंग्य रचना "मौलाना का लड़का पादरी की लड़की" एक सामाजिक-धार्मिक आडंबरों पर करारी चोट करने वाली कहानी है। यह रचना धार्मिक कट्टरता, संकीर्ण मानसिकता और प्रेम के मानवीय मूल्यों को टकराव के रूप में प्रस्तुत करती है। परसाई ने इसमें हास्य और व्यंग्य के माध्यम से समाज की विसंगतियों को उजागर किया है। कहानी में एक मौलवी का बेटा और एक पादरी की बेटी आपस में प्रेम करते हैं, लेकिन धार्मिक नेताओं द्वारा इस रिश्ते का विरोध किया जाता है। परसाई दिखाते हैं कि धर्म के ठेकेदार स्वयं मानवीय संबंधों को नष्ट करने में लगे हैं, जबकि धर्म का वास्तविक उद्देश्य मनुष्य को जोड़ना है।प्रेम धर्म, जाति या संप्रदाय से ऊपर होता है, लेकिन समाज के ढांचे इसे स्वीकार नहीं करते। कहानी में युवा प्रेमियों का संघर्ष इसी विडंबना को दर्शाता है।

मौलाना और पादरी दोनों ही धर्म के नाम पर लोगों को बाँटते हैं, लेकिन उनके अपने बच्चे उनके उपदेशों को झुठला देते हैं। यहाँ परसाई धार्मिक नेताओं के पाखंड को बेनकाब करते हैं।

आज भी भारत में धार्मिक कट्टरता और सांप्रदायिकता के कारण प्रेम विवाहों को चुनौतियाँ झेलनी पड़ती हैं। परसाई की यह रचना आज भी उतनी ही प्रासंगिक है, जितनी उनके समय में थी। यह कहानी हमें याद दिलाती है कि मानवीय रिश्ते धर्म से बड़े होते हैं।

इस पुस्तक की आठवीं व्यंग्य रचना 'लंका विजय के बाद' एक चुटीला और गहन सामाजिक-राजनीतिक व्यंग्य है, जो रामायण के प्रसंग को आधार बनाकर आधुनिक युग की विसंगतियों पर प्रहार करती है। यह कहानी रावण की मृत्यु के बाद लंका में होने वाले परिवर्तनों और उसके प्रभावों को एक व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करती है।कहानी में रावण के पतन के बाद लंका में राम द्वारा स्थापित नई व्यवस्था का वर्णन है। विभीषण को लंका का राजा बनाया जाता है, लेकिन वह राम की अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतरता। नई सरकार भ्रष्टाचार, अक्षमता और पाखंड से ग्रस्त हो जाती है। अंततः राम को लंका छोड़कर जाना पड़ता है, क्योंकि वहाँ की व्यवस्था उनके आदर्शों के अनुरूप नहीं चल पाती।परसाई ने रामायण के पौराणिक प्रसंग को आधुनिक संदर्भ में रखकर राजनीतिक और सामाजिक भ्रष्टाचार पर करारा व्यंग्य किया है।लंका की नई सरकार भारत की तत्कालीन (और वर्तमान) राजनीतिक व्यवस्था का प्रतीक है, जहाँ सत्ता परिवर्तन के बाद भी भ्रष्टाचार और अयोग्यता बनी रहती है।विभीषण का चरित्र उन नेताओं का प्रतिनिधित्व करता है, जो सत्ता में आकर जनता के हितों की अनदेखी करते हैं। यह कहानी आज भी प्रासंगिक है, क्योंकि भ्रष्टाचार, राजनीतिक पाखंड और जनता की उपेक्षा जैसी समस्याएँ अभी भी बनी हुई हैं।

इस पुस्तक की नववीं व्यंग्य रचना 'मेनका का तपोभंग' है । इसके अन्तगत परसाई जी ने यह दिखाने की कोशिश की है कि, किस प्रकार इंद्र का सिंघासन जब डोलने लगता है और उन्हें पता चलता है कि पृथ्वी पर कोई मनुष्य ऐसा है जो अधिक ताप-पुण्य कर सिंघासन प्राप्त करना चाह रहा है तो वे मेनका को उसकी तपस्या भंग करने के लिए भेजते हैं । यहाँ पृथ्वी पर भैयाजी सभी की मदद करते हैं । जब मेनका उनके ऑफिस में उनका तपोभंग करने के लिए वेश बदलकर नौकरी के लिए आती है तब भैयाजी द्वारा साक्षात्कार में पूछे गए प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाती फिर भी भैयाजी द्वारा उसका चयन किया जाता है और भैयाजी उसपर लट्टू बन उसके आगे-पीछे घूमाने लगते हैं । मेनका को भैया जी को रिझाने के लिए न तो कोई भाव-भंगिमा बनानी पडी न ही कोई तीर-तरकश चलाना पड़ा । एक दिन भैया साब ने मेनका के सामने अपना प्रणय निवेदन किया । मेनका को लगा कि अब इंद्र के सिंहासन का खतरा टल गया है । तो वह सारा वृतांत भैया जी से बताती है । कहती है मैं तो इंद्र का सिंहासन बचाने और तुम्हारी तपस्याभंग करने आई थी । किन्तु भैया जी ने जब उसे जबाब दिया कि, "मुझे गलत समझा गया । मैंने इन्द्रासन पाने के लिए, नहीं तपस्या की । मुझे यह कुछ नहीं चाहिए । मैं तो तुम्हारे लिए तपस्या कर रहा था मेरी मेनका रानी!'उनके शब्दों से मेनका का सारा अभिमान नष्ट हो गया वह ग्लानि से गल गयी यह सोचकर कि आपने मुझ जैसी शक्तिमान अप्सरा का का प्रयोग किस कार्य के लिए किया है । इस प्रकार स्वयं मेनका का तपोभंग हो जाता है ।

इस पुस्तक की दसवीं व्यंग्य रचना त्रिशंकु बेचारा! भारतीय समाज के उस द्वंद्व को उजागर करती है, जहाँ व्यक्ति न तो पूरी तरह से पुराने मूल्यों को छोड़ पाता है और न ही नए आधुनिक मूल्यों को अपना पाता है। यह रचना पौराणिक पात्र त्रिशंकु की कथा को आधुनिक संदर्भ में प्रस्तुत करती है, जो आज के मनुष्य की असमंजस स्थिति का प्रतीक है।पौराणिक कथा के अनुसार, त्रिशंकु एक ऐसा राजा था जो स्वर्ग जाना चाहता था, लेकिन उसे न तो स्वर्ग में जगह मिली और न ही पृथ्वी पर। परसाई इस कथा को आधुनिक युग के संदर्भ में पेश करते हुए दिखाते हैं कि आज का मनुष्य भी उसी त्रिशंकु की तरह अधर में लटका हुआ है। वह पुरानी परंपराओं और नए आधुनिक विचारों के बीच झूलता रहता है, जिससे उसकी स्थिति हास्यास्पद और दयनीय बन जाती है।परसाई जी इस रचना के माध्यम से भारतीय समाज की दोहरी मानसिकता पर प्रहार करते हैं, जहाँ लोग पश्चिमी सभ्यता की चकाचौंध से प्रभावित होते हैं, लेकिन अपनी रूढ़िवादी सोच को छोड़ नहीं पाते। यह विडंबना ही "त्रिशंकु बेचारा" का मूल विषय है। "त्रिशंकु बेचारा" हरिशंकर परसाई की एक उत्कृष्ट व्यंग्य रचना है, जो आधुनिक मनुष्य की विवशताओं और विडंबनाओं को प्रस्तुत करती है। यह रचना न केवल पाठक को हँसाती है, बल्कि उसे आत्मचिंतन के लिए भी प्रेरित करती है। परसाई का व्यंग्य सिर्फ मनोरंजन नहीं करता, बल्कि समाज को एक दर्पण दिखाने का काम भी करता है। "त्रिशंकु बेचारा" आज के युग की विसंगतियों का प्रतीक है, जहाँ मनुष्य अपनी अस्मिता की खोज में लगातार अधर में लटका हुआ है।

इस पुस्तक की ग्यारहवीं व्यंग्य रचना "बेताल की 26वीं कथा"एक व्यंग्यात्मक निबंध है, जो पारंपरिक बेताल कथाओं के ढाँचे का उपयोग करते हुए आधुनिक सामाजिक-राजनीतिक विसंगतियों पर प्रहार करता है। यह रचना परसाई के विशिष्ट शैलीगत वैशिष्ट्य—तर्कसंगतता, व्यंग्य की धार और सरल भाषा—का उत्कृष्ट उदाहरण है।परसाई ने बेताल-विक्रम संवाद की पुरानी कथा-योजना को आधुनिक संदर्भ दिया है। 26वीं कथा में बेताल एक प्रतीक बन जाता है, जो समाज की विसंगतियों को उजागर करता है, जबकि राजा विक्रम आधुनिक व्यक्ति की अकर्मण्यता और तर्कहीनता का प्रतिनिधित्व करते हैं। गंभीर विषयों को भी हल्के-फुल्के अंदाज में पेश किया गया है, जैसे राजा विक्रम का बेताल के सामने हार मान लेना आज के नेताओं की अक्षमता की याद दिलाता है।यह रचना आज भी उतनी ही प्रासंगिक है, क्योंकि भ्रष्टाचार, सामाजिक विषमता और राजनीतिक ढोंग जैसी समस्याएँ अभी भी बरकरार हैं। परसाई का व्यंग्य समय से आगे का है, जो हर युग में पाठकों को झकझोरता रहेगा। "बेताल की 26वीं कथा" हरिशंकर परसाई की उस दृष्टि को दर्शाती है, जो समाज की कुरीतियों को बिना लाग-लपेट के उघाड़ती है। यह रचना न केवल मनोरंजन करती है, बल्कि पाठक को एक सक्रिय नागरिक बनने की प्रेरणा भी देती है। परसाई का व्यंग्य सिर्फ आलोचना नहीं, बल्कि परिवर्तन का आह्वान है।

इस पुस्तक की बारहवीं व्यंग्य रचना "बेताल की २७ वीं कथा "एक रहस्यमय और नैतिक संदेश से भरपूर कहानी है। यह कथा राजा विक्रमादित्य और बेताल के बीच चलने वाले संवाद का अंतिम भाग है, जिसमें बेताल राजा की परीक्षा लेता है। कथा एक ब्राह्मण की कहानी से शुरू होती है, जिसकी तीन पुत्रियाँ हैं। एक दिन, वह अपनी सबसे छोटी पुत्री को श्राप दे देता है कि वह राक्षसी बन जाएगी। श्राप के कारण वह पुत्री वन में राक्षसी के रूप में रहने लगती है। बाद में, एक राजकुमार उसके पास आता है, और राक्षसी उससे प्रेम करने लगती है। जब राजकुमार उसे छोड़कर चला जाता है, तो वह उसका पीछा करती है और उसे मार देती है। फिर वह अपने पिता (ब्राह्मण) के पास जाती है और उसे भी मार देती है। अंत में, वह खुद को आग में भस्म कर लेती है।बेताल राजा विक्रमादित्य से पूछता है "इस पूरे घटनाक्रम में सबसे अधिक पापी कौन है?" राजा उत्तर देता है: "राजकुमार, क्योंकि उसने राक्षसी के प्रेम को ठुकराकर उसके क्रोध को जन्म दिया।" यह सुनकर बेताल फिर से पेड़ पर लौट जाता है।

२७वीं कथा दुःखांत प्रेम, नैतिक जिम्मेदारी और कर्म के परिणाम पर एक गहन दृष्टि प्रदान करती है। बेताल पच्चीसी की अन्य कथाओं की तरह, यह भी पाठक को विवेक से निर्णय लेने की प्रेरणा देती है। राजा विक्रमादित्य का उत्तर इस बात को रेखांकित करता है कि मानवीय संबंधों में संवेदनशीलता सबसे महत्वपूर्ण है।इस कथा की सबसे बड़ी शक्ति यह है कि यह सही-गलत के बीच धुंधली रेखा को दिखाती है, जिससे पाठक अपने नैतिक दृष्टिकोण पर पुनर्विचार करता है।

इस पुस्तक की तेरहवीं व्यंग्य रचना "बेताल की २८ वीं कथा उनकी प्रसिद्ध व्यंग्य रचना । यह कृति आधुनिक समाज पर करारी चोट करती है और परंपरागत बेताल कथाओं के ढाँचे का उपयोग करते हुए नए सिरे से समकालीन यथार्थ को उजागर करती है। यह कहानी

बेताल और राजा विक्रमादित्य के बीच एक नए प्रकार के संवाद पर आधारित है, जहाँ बेताल पारंपरिक पहेलियों के बजाय उल्टे सवाल पूछता है। ये सवाल समाज की विसंगतियों, राजनीतिक भ्रष्टाचार, नैतिक पतन और मानवीय मूर्खताओं को उजागर करते हैं। २८वीं कथा में परसाई एक ऐसे विषय को उठाते हैं जो आज के समय में भी प्रासंगिक है—अंधविश्वास, ढोंगी धार्मिक नेताओं की पोल और समाज की सामूहिक मूर्खता। परसाई की भाषा सरल, मुहावरेदार और चुटीली है। वे हास्य के माध्यम से गंभीर सामाजिक समस्याओं को उठाते हैं। इस कथा में भी वे धार्मिक पाखंड और अंधविश्वास पर प्रहार करते हैं, जैसे-ढोंगी बाबाओं द्वारा लोगों को मूर्ख बनाने की प्रवृत्ति। अंधश्रद्धा के कारण समाज का तर्कहीन हो जाना। धर्म के नाम पर फैलाया गया भय और लोगों का शोषण।परसाई ने इस कथा में न केवल धार्मिक पाखंड बल्कि राजनीतिक चालाकी और प्रशासनिक भ्रष्टाचार पर भी व्यंग्य किया है। उनके पात्र अक्सर आम आदमी की भूमिका में होते हैं, जो सिस्टम के ऊपर सवाल उठाते हैं। बेताल-विक्रम की पुरानी कथाएँ नैतिक शिक्षा देती थीं, लेकिन परसाई ने इसे आधुनिक समाज की कुरीतियों के विरुद्ध एक हथियार बना दिया। उनकी कथा में बेताल सिर्फ पहेली नहीं सुलझाता, बल्कि समाज की गलतियों को चिह्नित करता है।

इस पुस्तक की चौदहवीं व्यंग्य रचना “राग विराग" कहानी है । यह एक व्यंग्यप्रधान कहानी है, जो एक ऐसे राजा की कथा बयान करती है जिसे अपने राज्य, प्रजा और सत्ता से विरक्ति हो जाती है। राजा का चरित्र पारंपरिक शासकों के प्रतिमान को तोड़ता है-वह न तो न्यायप्रिय है, न ही अत्याचारी, बल्कि उदासीन और निर्लिप्त है। उसकी इस विरक्ति के पीछे समाज और सत्ता के प्रति एक तीखा व्यंग्य छुपा है। कहानी में राजा के माध्यम से परसाई ने सत्ताधीशों की मनोवृत्ति, प्रजा की मूर्खता और राजनीतिक व्यवस्था के खोखलेपन को उजागर किया है।राजा की विरक्ति सत्ता के प्रति एक अलगाववादी दृष्टिकोण को दर्शाती है। वह राजकाज में कोई रुचि नहीं लेता, क्योंकि उसे लगता है कि सत्ता एक नाटक है और शासन करना व्यर्थ है। परसाई यहाँ सत्ता के मिथक को तोड़ते हैं—राजा न तो "रामराज्य" का स्वप्न देखता है, न ही वह कोई अत्याचारी है। उसकी निष्क्रियता ही उसका सबसे बड़ा अस्त्र है। प्रजा राजा की विरक्ति को उसकी "महानता" समझती है। वे उसकी निष्क्रियता को भी पूजने लगते हैं, जो समाज की अंधश्रद्धा और मूर्खता को दर्शाता है। परसाई यहाँ जनसाधारण की उस प्रवृत्ति पर चोट करते हैं जो शासकों को दैवीय मानकर उनके हर कृत्य को सही ठहराती है। प्रजा अंधविश्वासी और चापलूस है। वह राजा के हर निर्णय को सही ठहराती है, चाहे वह उसके लिए हानिकारक ही क्यों न हो । यह पात्र समाज की उस सोच का प्रतीक है जो नेतृत्व के नाम पर खोखले आदर्शों को पूजती है। "राग विराग" हरिशंकर परसाई का एक उत्कृष्ट व्यंग्य है जो सत्ता, प्रजा और समाज के बीच के विरोधाभासों को हास्य के माध्यम से उजागर करता है। राजा की विरक्ति और प्रजा की मूर्खता दोनों ही आधुनिक युग की राजनीतिक विडंबनाओं का दर्पण हैं। परसाई की यह कहानी पाठकों को हँसाते-हँसाते सोचने पर मजबूर कर देती है कि क्या सचमुच सत्ता और समाज का यही सच है?

इस पुस्तक की पन्द्रहवीं व्यंग्य दो कथाएं हैं । जिसमें दो लघुकथाओं का समावेश है ।

i). ईडन के सेब
ii). नहुष का निष्कासन

"ईडन के सेब" एक लघुकथा के रूप में उनके व्यंग्य का एक नमूना है, जो बाइबिल के 'गार्डन ऑफ ईडन' की पौराणिक कथा को आधुनिक सामाजिक-मनोवैज्ञानिक संदर्भ में प्रस्तुत करता बाइबिल के अनुसार, ईडन के बाग़ में आदम और हव्वा ने शैतान के बहकावे में 'वर्जित फल' (सेब) खा लिया, जिसके कारण उन्हें स्वर्ग से निकाल दिया गया। परसाई इस कथा को एक नए अंदाज़ में पेश करते हैं।परसाई मानवीय स्वभाव की उस विडम्बना को उजागर करते हैं, जहाँ व्यक्ति नियम तोड़ने के लिए आतुर रहता है, फिर भी दंड से डरता है।

"नहुष का निष्कासन" पौराणिक आधार यह कथा महाभारत के एक प्रसंग से प्रेरित है, जहाँ नहुष (एक अहंकारी राजा) को इंद्र के स्थान पर स्वर्ग का राजा बनाया जाता है, लेकिन अपनी अयोग्यता और अहंकार के कारण उसे निष्कासित कर दिया जाता है। परसाई का संदर्भ परसाई ने इस पौराणिक कथा को आधुनिक प्रशासनिक व्यवस्था और नेतृत्व की विसंगतियों पर व्यंग्य के रूप में प्रस्तुत किया है।

हरिशंकर परसाई कृत "फैमिली प्लानिंग "फैमिली प्लानिंग" हरिशंकर परसाई की एक व्यंग्यप्रधान लघुकथा है । जो भारतीय समाज में फैमिली प्लानिंग (परिवार नियोजन) के प्रति लोगों के दिखावटी और अज्ञानतापूर्ण रवैये को उजागर करती है। जीव और ब्रह्मा के माध्यम से लेखक ने एक मास्टर के घर में सातवीं संतान के रूप में पैदा होने के विरोध में रचना लिखी है । जो कि, व्यंग्यात्मक हास्यप्रधान रचना है ।

हरिशंकर परसाई की "पाठक जी का केस" इस पुस्तक की सत्रहवीं रचना है ।" पाठक जी का केस" उनकी प्रसिद्ध व्यंग्य कहानी है, जिसमें एक सामान्य पाठक की विवशता और न्याय व्यवस्था की विडंबनाओं को उजागर किया गया है। कहानी में एक पाठक (जिसे 'पाठक जी' कहा जाता है) किताबें पढ़ने का शौकीन है, लेकिन उसकी आर्थिक स्थिति खराब होने के कारण वह किताबें खरीद नहीं पाता। एक दिन वह एक किताब की दुकान से बिना पैसे दिए किताब लेकर चला जाता है और पकड़ा जाता है। मामला कोर्ट में पहुँचता है, जहाँ न्यायालय की जटिल प्रक्रियाएँ और कानूनी पेचीदगियाँ उसकी समस्या को और बढ़ा देती हैं। अंततः पाठक जी को सजा होती है, लेकिन व्यवस्था पर एक गहरा व्यंग्य छोड़ दिया जाता है। कि, पाठक जी गरीब है और किताबों का प्रेमी होने के बावजूद वे खरीदने में असमर्थ है। समाज में शिक्षा तक पहुँच का अभाव और आर्थिक विषमता उसकी मजबूरी का कारण बनती है, लेकिन व्यवस्था उसकी मजबूरी को नहीं समझती। कहानी में पुस्तकों के प्रति समाज के दोहरे रवैये को दिखाया गया है। एक तरफ पाठक जी जैसे लोग किताबों के लिए तरसते हैं, तो दूसरी तरफ व्यवस्था उन्हें अपराधी ठहराती है। "पाठक जी का केस" एक ऐसी कहानी है जो न्याय व्यवस्था, सामाजिक असमानता और शोषण पर प्रहार करती है। परसाई ने अपने विशिष्ट व्यंग्य शैली में एक साधारण घटना के माध्यम से बड़े सवाल उठाए हैं। यह कहानी आज भी प्रासंगिक है, क्योंकि आज भी आम आदमी को न्याय पाने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इस तरह, हरिशंकर परसाई ने इस कहानी के माध्यम से पाठकों को सोचने पर मजबूर किया है कि क्या वास्तव में न्याय सभी के लिए समान है?

हरिशंकर परसाई की कहानी वे सुख से नहीं रहे "इस पुस्तक की एक व्यंग्यात्मक रचना है, जो मध्यवर्गीय समाज की बनावट, उसकी मानसिकता और सामाजिक विसंगतियों को बेहद ही निपुणता से उजागर करती है। परसाई जी ने इस कहानी में सामाजिक प्रतिष्ठा, दिखावटीपन और मनुष्य की अंदरूनी अशांति को गहराई से चित्रित किया है। कहानी में एक ऐसे व्यक्ति का वर्णन है जो बाहर से तो सुखी और संपन्न दिखता है, लेकिन अंदर से वह अत्यंत अशांत और दुखी है। उसका सारा जीवन दूसरों को दिखाने और समाज में एक ऊँची छवि बनाए रखने की कोशिश में बीत जाता है। वह अपनी वास्तविक भावनाओं को दबाकर एक झूठी ज़िंदगी जीता है, जिससे अंततः उसका अस्तित्व ही खोखला हो जाता है। परसाई जी ने इस कहानी में व्यंग्य के माध्यम से मध्यवर्ग की उस मानसिकता को उघाड़ा है जहाँ इंसान दिखावे और सामाजिक स्वीकृति के लिए अपनी वास्तविक खुशी को त्याग देता है। कहानी का शीर्षक ही "वे

सुख से नहीं रहे" एक व्यंग्यात्मक टोन सेट करता है, जो पाठक को यह सोचने पर मजबूर करता है कि क्या वास्तव में सुख का अर्थ केवल दिखावा है? कहानी में मध्यवर्ग की उस विडंबना को दिखाया गया है जहाँ व्यक्ति अपनी हैसियत दिखाने के लिए ऋण लेकर भी महँगी चीज़ें खरीदता है, लेकिन अंदर से वह हमेशा तनाव और असंतोष से भरा रहता है। परसाई जी ने इसके माध्यम से यह संदेश दिया है कि भौतिक सुख-सुविधाएँ वास्तविक खुशी नहीं दे सकतीं।

कहानी का मुख्य पात्र एक ऐसा व्यक्ति है जो समाज के डर से अपनी असलियत छुपाता है। उसकी यह मनोदशा आधुनिक मनुष्य की उस मजबूरी को दर्शाती है जहाँ वह सामाजिक दबाव के कारण अपनी इच्छाओं को कुचल देता है। यह चरित्र पाठकों को अपने आसपास के लोगों की याद दिलाता है, जिससे कहानी अधिक प्रभावी बन जाती है। कहानी का मूल संदेश यह है कि "दिखावे की ज़िंदगी कभी सुखद नहीं होती।" परसाई जी बताते हैं कि जो व्यक्ति दूसरों को खुश करने के लिए जीता है, वह कभी स्वयं सुखी नहीं रह पाता। यह कहानी पाठकों को आत्ममंथन के लिए प्रेरित करती है कि क्या वे भी ऐसी ही झूठी ज़िंदगी जी रहे हैं? वे सुख से नहीं रहे" एक ऐसी कहानी है जो पाठक को हँसाते-हँसाते उसकी आँखें खोल देती है। हरिशंकर परसाई ने अपने अनूठे व्यंग्य से समाज की कुरीतियों पर प्रहार किया है और यह बताया है कि वास्तविक सुख भौतिकता में नहीं, बल्कि आत्मसंतोष में है।

इस पुस्तक की उन्नीसवीं और अंतिम कहानी "आमरण अनशन" एक ऐसे व्यक्ति की कहानी है जो अनशन पर बैठता है, लेकिन उसका उद्देश्य स्पष्ट नहीं होता। वह अपने अनशन को लेकर इतना उत्साहित है कि उसमें राजनीतिक या सामाजिक मुद्दे से ज्यादा, अनशन करने का नाटक महत्वपूर्ण हो जाता है। धीरे-धीरे उसके अनशन का मूल उद्देश्य गौण हो जाता है और वह केवल दिखावे और प्रसिद्धि के लिए अनशन जारी रखता है। अंततः, जब उसकी मांगें पूरी हो जाती हैं, तो वह अनशन तोड़ने के बजाय नए बहाने ढूंढ़ने लगता है, क्योंकि उसकी पहचान अब इसी "आमरण अनशन" से जुड़ चुकी है। परसाई ने इस कहानी के माध्यम से भारतीय समाज में "अनशन" की राजनीतिक और सामाजिक प्रवृत्ति पर करारा व्यंग्य किया है। यह कहानी दिखाती है कि कैसे अनशन जैसा गंभीर विरोध का माध्यम एक नाटक

कहानी का मुख्य पात्र अपने अनशन के माध्यम से स्वयं को महत्वपूर्ण साबित करना चाहता है। यहाँ परसाई मानवीय अहंकार और समाज में पहचान बनाने की जद्दोजहद को उजागर करते हैं। "आमरण अनशन" हरिशंकर परसाई के व्यंग्य का एक उत्कृष्ट उदाहरण है, जो सामाजिक ढोंग और राजनीतिक छल को बेनकाब करता है। यह कहानी न केवल मनोरंजन करती है, बल्कि पाठक को सोचने पर मजबूर भी करती है। परसाई का लेखन आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना उनके समय में था, क्योंकि समाज के ढोंग और आडंबर कम नहीं हुए हैं। इस कहानी का संदेश स्पष्ट है – "अगर विरोध का उद्देश्य सच्चा नहीं है, तो वह केवल एक तमाशा बनकर रह जाता है।"

निष्कर्ष

अस्तु हम कह सकते हैं कि, जैसे उनके दिन फिरे कहानी की सभी कहानियाँ भारतीय कुप्रथाओं और विसंगतियों का चित्रण करते हैं। यह कहानी पाठकों को आत्ममंथन के लिए प्रेरित करती है। यह कहानियाँ न केवल मनोरंजन करती है, बल्कि गहन सामाजिक चिंतन की प्रेरणा भी देती है।

सन्दर्भ

1. जैसे उनके दिन फिरे: हरिशंकर परसाई: प्रकाशक: भारतीय ज्ञानपीठ १८, इंस्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नयी दिल्ली-११००३२.
2. https://www.hindisamay.com/content/621/1/%E0%A4%B9%E0%A4%B0%E0%A4%BF%E0%A4%B6%E0%A4%82%E0%A4%95%E0%A4%B0-%E0%A4%AA%E0%A4%B0%E0%A4%B8%E0%A4%BE%E0%A4%88--%E0%A4%B5%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A4%82%E0%A4%97%E0%A5%8D%E0%A4%AF-%E0%A4%9C%E0%A5%88%E0%A4%B8%E0%A5%87-%E0%A4%89%E0%A4%A8%E0%A4%95%E0%A5%87-%E0%A4%A6%E0%A4%BF%E0%A4%A8-%E0%A4%AB%E0%A4%BF%E0%A4%B0%E0%A5%87.cspx
3. https://pustak.org/index.php/books/bookdetails/732